1 हे जिन तेरो सुजस.....

हे जिन तेरो सुजस उजागर, गावत हैं मुनिजन ज्ञानी ।। टेक ।।
दुर्जय मोह महाभट जाने, निजवश कीने जगप्रानी,
सो तुम ध्यानकृपान पानी गहि, ततछिन ताकी थिति भानी ।।1।।
सुप्त अनादि अविद्या निद्रा, जिन जन निजसुधि विसरानी ।
है सचेत तिन निज निधि पाई, श्रवन सुनी जब तुम वानी ।।2।।
मंगलमय तु जगमें उत्तम, तुही शरन शिव मग दानी ।
तुवपद-सेवा परम औषधि, जन्म जरा मृतगद हानी ।। 3 ।।
तुमरे पंच कल्यानक माहीं, त्रिभुवन मोददशा ठानी,
विष्णु विम्बर, जिष्णु दिगम्बर, बुध, शिव कह ध्यावत ध्यानी ।। 4 ।।
सर्व दर्व गुन परजय परनति, तुम सुबोध में नहिं छानी ।
तातें 'दौल' दास उर आशा, प्रगट करो निज रस सानी ।।5।।

हे जिनेन्द्र भगवान! आपका सुयश तीनो लोकों में प्रकट हो रहा है, फैल रहा है, मुनिगण और ज्ञानी उसका गुणगान करते हैं। टेक।

हे जिनेश्वर! सारे संसार को वश में करने वाले मोह रूपी महायोद्धा को आपने अपनी ध्यान रूपी तलवार हाथ में लेकर क्षणमात्र में ही उसकी वास्तविक (खोखली) स्थिति को जान लिया है।।१।।

हे ज्ञानसूर्य! अनादि काल से अज्ञान की गहरी निद्रा में सोकर जो अपने आपको भूल गये हैं, जिन्हें अपनी सुधि नहीं रही है, उन्होंने जब आपका उपदेश सुना तो सचेत होकर, अपनी निज निधि को प्राप्त कर लिया है।।२।।

हे प्रभो! आप ही जगत में मंगल हो, उत्तम हो शरण भी आप ही हो, आप ही मोक्षमार्ग को बताने वाले दानी – उपकारक हो। आपके चरणों की सेवा–भक्ति ही जन्म – मृत्यु – रोग रूपी विष को हरने वाली उनका निवारण करने वाली परम औषधि है।।३।।

हे त्रिभुवनगामी! आपके पंचकल्याणकों के अवसर पर तीनों लोकों में साता की, आनंद की लहर दौड़ जाती है। आप विष्णु अर्थात्, ज्ञान के अनंत और असीमित आकाश है, जिष्णु – अपने आपको व कर्म रूपी शत्रुओं को जीतने वालें दिगम्बर हैं, बुद्धिमान है – ज्ञानी हैं और कल्याणकारी हैं, मंगल हैं, यह कहकर ध्यान करने वाले आपका ध्यान करते हैं।।४।।

हे मुक्तिकंत! सभी द्रव्य–गुण–पर्याय और उनकी परिणति आपके ज्ञान में स्पष्ट झलकते हैं, उन्हें आप युगपत एक साथ सहज ही अपने ज्ञान में झलकता हुआ देखते हैं। विश्व में आपसे कुछ भी छिपा हुआ नहीं है। अत: कविवर दौलतरामजी कहते हैं कि मेरे मन में यह कामना है कि आप अपने समान मुझे भी आत्म रस से भरपूर कर दें।।५।।